International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 955-956

बुनियादी शिक्षा एवं गाँधी चिंतन

डॉ0 सतनाम सिंह
Vill. Damli, P.O Rawa, Tehsil Shahabad Markanda, Distt. Kurukshetra, Haryana, India

प्रस्तावना

मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं और जीवन के व्यावहारिक पक्ष को सहज बनाने के लिए प्राचीन गुरूकुल कालीन शिक्षा–व्यवस्था में भी शिल्प तथा कौशल शिक्षण का प्रावधान था। इसलिए हमारे शैक्षिक ग्रंथ 64 कलाओं और विद्याओं के शिक्षण की जानकारी देते हैं। दुर्भाग्य से राजसत्ता के लोभ एवं शासन तंत्र प्रणाली की अंहवादिता ने उस उदात्त शिक्षा का रूप ही बदल दिया और आज हम सैद्वान्तिक जीवन के ऐसे मोड़ पर खड़े हैं जहां से प्रायोगिक शिक्षा, कला एवं कौशल से संबद्ध विषय वस्तुएँ तिरोहित होती जा रही हैं। आज उच्च तकनीकी से जुड़े शिल्पों को आम जीवन तक ले जाना कठिन ही नहीं जोखिम भरा दुःसाहसिक प्रयास भी है। इसी विडम्बना से बचने के लिए गाँधी जी ने 1937 में बेसिक शिक्षा योजना के माध्यम से भारतीय जनता को मन, शरीर, आत्मा एवं बुद्धि को उदात्त बनाने का विचार रखा सिमें आत्मविस्तार, स्वतंत्रता एवं स्वावलम्बन को आधार बनाया गया। उस समय भारतीय ग्रामीण जीवन में हिंसा, गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी, शोषण, अन्याय तथा छूआछूत से लड़ने का साहस नहीं था, न ही दीक्षा थी। इसलिए उन्होंने कहा था "निर्धन एवं साधनहीन को शिक्षा के अधिकार से वंचित ने रखा जाय" उनका यह कथन केवल गुलामी से मुक्ति का ही संदेश नहीं था अपितु वे भारत की जनता में आत्मविश्वास जगाते हुए मातृभाषा, शिल्पशिक्षण तथा उत्पादकता के दर्शन को पिरोना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने वैचारिक संघर्ष के साथ–साथ अंग्रेजी शासन एवं सत्ता का विरोध भी किया। उस विरोध का कारण मात्र राजनैतिक आजादी नहीं थी अपितु वैचारिक स्वतंत्रता और स्वाभिमान का संरक्षण भी था।

गाँधीजी ने "भारत वर्ष को स्वावलम्बन एवं रोजगारपरक लक्ष्य की ओर ले जाने का प्रयास किया जहां आज भी एक करोड़ से अधिक बच्चे प्राईमरी शिक्षा से वंचित है।" यह कितना बड़ा मानवीय मूल्यों के पतन का संकेत था जिसे गाँधी जी ने बड़ी सूझ तथा सतर्कता एवं दूरदृष्टि से पहचाना। उन्होंने अपने संकल्प में इसी बात को बार–बार दुहराया भी था कि भारत में जनशक्ति अधिक है अतः सभी लोगों को शिल्प के माध्यम से कोई न कोई जीविकोपार्जन का रास्ता तलाशना चाहिए और अंग्रेजी की गुलामी से बचना चाहिए क्योंकि अंग्रेजी पढ़कर केवल हम गुलामी ही कर सकते है, आत्मविस्तार नहीं। गाँधी जी ने बेसिक शिक्षा में बचपन की उस तस्वीर की छवीं भी देखी जिसमें भारत के उज्ज्वल भविष्य को मूर्त रूप मिल सके। वे शिल्प में बचपन को जीवन्त बनाना चाहते थे। श्रम, शोषण एवं पुस्तकों के बोझ से बालक को मुक्त रखने का विचार गाँधी शिक्षादर्शन का प्रमुख प्रकल्प था। यदपि स्वतंत्र भारत में इस तथ्य को जनता ने स्वीकार किया परन्तु धीरे–धीरे वह फिर अंग्रेजी मानसिकता की ओर आकृष्ट होने लगी और यह एक मानस बनने लगा कि बच्चों को अंग्रेजी पढाया जाये और उन्हें कान्वेन्ट विद्यालय में भेजा जाये, भले ही वे कोरी सैद्धांतिक शिक्षा प्राप्त करें और सामान्य नौकरी के लिए भागते रहें। इसलिए गाँधी जी विश्वास पूर्वक मानते थे कि "बचपन के यही हाथ भविष्य के मानव का निर्माण करते है"। कुछ लोगों का उस समय भी यह भ्रम था कि गाँधी जी बालक को शिल्प के माध्यम से शिक्षा तो दी जाय और शिल्प उसका परम्परागत व्यवहार हो जिससे उसे सीखने में अतिरिक्त प्रयास न करना पड़े और वह अपने परम्रागत कार्य को अच्छी तरह कर सके क्योंकि शिल्प में किसी न किसी उत्पादन का दर्शन भी छिपा होता है। दर्शन की यही अवधारणा गाँधी जी लेकर चले थे और इसी को अपने अभियान का आदर्शवाक्य माना था। हम आज भी यह स्वीकार करते है कि अनुत्पादक शिक्षा का कोई न तो यथार्थ है न औचित्य। इस खतरे के सम्बध में गाँधी जी ने कहा था कि "प्रत्येक बालक को उपयोगी और उत्पादक शिल्प के माध्यम से शिक्षा दी जाय, शिक्षा का माध्यम शिल्प हो" लेकिन यह परम्परागत शिल्प क्या उस संस्था में सभव होगा जहां बालक पढ़ेगा ? यह एक स्वाभाविक प्रश्न गाँधी जी के सामने रखा गया। गाँधी जी ने इस विषय पर बहुत सही दृष्टिकोण रखा और कहा इसके लिए अलग से प्रावधान न हो बल्कि "शिल्प पूर्णरूपेण विद्यालय में संचालित किया जाय, ऐच्छिक हो, सार्थक हो, रूचिकर हो, सहभागिता एवं समन्वय का भाव बढ़ावे, अर्थोत्पादक हो, व्यावहारिक हो, विद्यालयी समुदाय के अनुकूल हो, तथा स्वयं सहायक हो। गाँधी जी ने शिक्षा को ऐसा प्रथम हथियार बनाया जो सम्पूर्ण राष्ट्र और समाज का उद्धार कर सकती थी। गाँधी जी के मन में यह विचार सदा बना रहता था कि हमारा भारत ग्रामीण जीवन का भारत है और जब तक "हमारे भारतीय ग्रामीण जीवन को स्वयं सहायक बनाने में शिक्षा अनिवार्य नहीं होगी तब तक न हम स्वतंत्र हो पाएंगे।" न ही हमारा विकास हो पाएगा। लेकिन इसका अर्थ कदापि यह नहीं लगाना चाहिए कि गाँधी जी केवल बालकों को शिल्प की शिक्षा देकर उन्हें परम्परागत कार्य तक सीमित करना चाहते थे या स्वावलम्बी बनाना चाहते थे। उनका शिक्षादर्शन पूर्ण आत्मविस्तार के साथ मानव–मूल्यों को जीवन्त रखने वाला था। उन्होंने कहा था कि "आत्मविस्तार या चित्तशुद्धि अथवा मन पर नियत्रण करने में शिक्षा के अतिरिक्त कोई सबल साधन नहीं" और यह कठिन भी नहीं था, लेकिन उनकी शिक्षा जब तक जन–जन का विषय नहीं बन पाती तब तक हम व्यक्ति के उत्थान या विकास की कल्पना भी नहीं कर सकते। इस विचार को पूरी दुनियाँ के शिक्षाशास्त्री भी मानते है। गाँधी जी न तो कोई आदर्शवादी थे और न अंध भौतिकवादी थे। वे विचार, व्यवस्था, आवश्यकता के अनुरूप अपने राष्ट्र, समाज एवं जीवन का आकार निर्धारित करते थे। वे विज्ञान के विरोधी नहीं थे पर विज्ञान के दुष्प्रभाव से परिचित अवश्य थे, क्योंकि उन्हें विश्वास था कि व्यक्ति जब भी विज्ञान का प्रयोग स्वार्थ एवं सृमद्धि हेतु करेगा तब त बवह विनाशकारी कदम उठाना चाहेगा, उसके अंदर स्वार्थ एवं प्रतिस्पर्द्धा बढ़ेगी और मानवीय विनाश के प्रयास प्रारम्भ हो जायेगे। इसलिए वे विज्ञान और बड़े–बड़े उद्योगों के विरोधी थे।

वे ऐसे उद्योग को बढ़ाना चाहते थे जिसमें व्यक्ति स्वयं अपने जीवन यापन के लिए श्रम करें और उससे पोषण युक्त हों। वे कुटीर उद्योग को जीवित रखना चाहते थे जिससे श्रम प्रधान देश में बेरोजगारी न बढ़े इसलिए "गाँधी जी जिस सीमा तक आदर्शवादी थे उससे अधिक यथार्थता के समीप थे। गाँधी दर्शन को समझने में कतिपय विद्वानों के मतभेद भी रहे। वे यह मानते थे कि गाँधी जी किसी आधुनिक विचारधारा या बात से प्रभावित है अथवा किसी एकमत का या विचार का समर्थन करते है जिससे बहुसस्कृतिधर्मी इस देश में कोई लाभ नहीं हो सकता। गाँधी जी की बुनियादी शिक्षा की अवधारणा एवं चिंतन का क्षेत्र विज्ञान, दर्शन समाज विज्ञान, अर्थशास्त्र आदि सभी प्रवृत्तियों के रूप में मानव तथा समाज के कल्याण के लिए निर्मित हुआ। इसलिए उन्होंने शिल्प के मूलधर्म में उत्पादन को सम्मिलित कर केवल आर्थिक उन्नयन ही नहीं चाहा, बल्कि वे शोषण, लालच के खिलाफ भी थे। इसलिए वे इस धारणा से बिल्कुल मुक्त थे कि शिल्प का उत्पादन हमारी गरीबी दूर करेगा बल्कि वे मानते थे कि शिल्प के उत्पादन से हम स्वावलम्बी होंगे। धनसंग्रह कर समाज के अन्य लोगों के शोषण का पाप वे नहीं लेना चाहते थे इसलिए वे स्वीकार करते थे कि "भारतवर्ष में जब तक अर्थशास्त्र विद्यालयी विषय तक सीमित होगा तब तक रामराज्य की कल्पना साकार नहीं हो सकती। यह मौलिक ढंग से की गई व्याख्या निश्चिय ही भारतीय जनमानस को आत्मविस्तार एवं आत्मजागरण का मार्ग प्रशस्त करने वाली थी। कहना न होगा कि गाँधी जी का यह जीवनदर्शन, यह शैक्षिक दृष्टिकोण निश्चित ही बुनियादी शिक्षा के व्यापक फलक का दस्तावेज था। वे भारतीय शिक्षा और सामाज की दशा का गंभीरता से अवलोकन किये थे। इसलिए वे नहीं चाहते थे कि शादियों की गुलामी का दुख भोग रही भारतीय जनता का जीवन ऐसी ासदी एवं संकट का सामना करता रहे। उन्होंने शिक्षा द्वारा जो उद्धार का व्रत लिया उसे पूरा करने के लिए ही शिक्षा दर्शन के रूप में बुनियादी तालीम की कल्पना की। उसे शिक्षानीति के रूप में देश की जनता के सामने रखा और शिल्प के माध्यम से जो शिक्षा का ताना बाना तैयार किया वह भारतीय शिक्षा के भविष्य का निर्धारण करने वाला सिद्ध हुआ। यहाँ पर गाँधी जी एवं बुनियादी शिक्षा के संदर्भ में कुछ विशेष विद्वानों की समीक्षा और उनके आधार पर की गई विशेष टिप्पणियों को देखना होगा जो आज की दृष्टि से प्रासंगिक और औचित्य पूर्ण हैं – डब्ल्यू रायवर्न ने 'द प्रोग्रेसिव स्कूल' में बेसिक शिक्षा योजना के अध्यक्ष के रूप में डॉ. जाकिर हुसेन के विचार को रखते हुए कहा है कि "बेसिक शिक्षा, शिक्षण विधि नहीं है, यह पाठ्यक्रम को निश्चित करने की विधि है। अध्यापक उन विधियों को प्रयोग करता है जो रोचक तथा प्रभावपूर्ण है। सभी प्रगतिशील विधियों का बुनियादी शिक्षा में स्थान हो सकता है, प्रयोग हो सकता है। इसी ग्रंथ में आगे यह भी बताया गया है कि – वर्धा योजना को भारत की निरक्षता की महान समस्या का समाधान करने के लिए अबतक किए जाने वाले प्रयोगों में से सबसे साहसी एवे पूर्ण माना जा सकता है।

इस पुस्तक के महत्त्वपूर्ण उद्धरणों में से एक उद्धरण यह भी है जिसे देना उचित होगा जो टी.एस. अविनाश लिंगम ने अपनी पुस्तक 'अण्डर स्टेडिंग बेसिक एज्यूकेशन' में कहा है कि – बुनियादी शिक्षा हमारे राष्ट्रपिता का अंतिम और संभवतया महानतम उपहार है। विश्व विद्यालय आयोग 1948 ने एक टिप्पणी देते हुए कहा कि – 'हम भारतवर्ष को वह मूल्यवान रूप दे सकेगे जिसकी हममे से बहुत लोग आशा करते है। इससे हमें अपनी शिक्षा योजना की समीक्षा में बाधा नही होगी। और हम चाहे गाँधी जी की योजना के कुछ विचार स्वीकार न करें फिर भी इस विचाराधारा में मनुष्य के व्यक्तिगत और मानसिक विकास के वे गुण है जिनकी सफलता भविष्य में प्रकट होगी।

इस सन्दर्भ में कोठारी आयोग की भी कुछ समीक्षात्मक टिप्पणियों पर विचार करना होगा जिसमें यह कहा है कि – गाँधी जी ने 25 वर्षों से भी पहले बुनियादी शिक्षा आन्दोलन शुरू किया और राष्ट्र के लिए प्रारम्भिक शिक्षा का प्रस्ताव रखा जिसका केन्द्र शारीरिक श्रम, उत्पात कार्य एवं सामुदायिक जीवन था। ..... बुनियादी शिक्षा से राष्ट्रीय चेतना जागृत हुई ..... हमारा विश्वास है कि इस प्रणाली की मूल बाते स्वतः ठीक है और थोड़े संशोधन से उन्हें हमारी शिक्षा प्रणाली की न केवल प्राथमिक अवस्था पर अपितु सारी अवस्थाओं पर शिक्षा का अंग बनाया जा सकता है। इसी सन्दर्भ में कोठारी आयोग की टिप्पणी को उद्धत करने हुए प्रोफेसर वी.एस. माथूर ने बताया है कि– इसे केवल प्राथमिक स्तर तक की शिक्षा न माना जाये यह एक स्वस्थ शिक्षा प्रणाली का पथ प्रदर्शन है। इसे निरन्तर बनाये रखा जाये। अन्यथा लोगों से संकुचित एवं हीन भावना विकसित हो सकती है क्योंकि यह शिक्षा कार्य अनुभव पर आधारित है।

और इसी समीक्षा के सन्दर्भ में उन्होंने आगे कहा कि 'कुछ लोग इसको अच्छी तरह नहीं समझे न तो इसका उचित क्रियान्वयन हुआ। नई तकनीक के कारण इसे यंत्रबद्धता का शिकार होना पड़ा और यह घुटन के कारण मृतप्राय हो गयी पर यह असफल नहीं हुई इसे ईमानदारी से लागू किया जाना अप्रेक्षित है।

सन्दर्भ

1. नई शिक्षा, उगमपथ, बनी पार्क जयपुर, अक्टुबर 1997 पृ.19
2. उपर्युक्त, अक्टुबर 2000, पृ. 18
3. हरिजन, 21 जुलाई 1937.
4. प्राईमरी शिक्षक, अप्रैल 1997, एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली, पृष्ठ 25–26
5. उपर्युक्त, पृष्ठ 25–26
6. हरिजन, 18 सितम्बर 1937
7. नई शिक्षा, अक्टुबर 2000, पृष्ठ 19
8. प्राइमरी शिक्षक, अक्टुबर 2004, पृष्ठ 22–23
9. नूरूल्ला एण्ड नायक, ए स्टूडेन्ट हिस्ट्री ऑफ एल्युकेशन इन इण्डिया पृष्ठ 338.39
10. पाठक, पी.डी. भारतीय शिक्षा एवं उसकी समस्याएँ, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा पृ. 263
11. उपर्युक्त, पृ0 221.22
12. उपर्युक्त, पृ0 120
13. अग्रवाल, जे.सी., भारतीय शिक्षा की वर्तमान समस्याएँ, नई दिल्ली, पृ0 51, 1986
14. उपर्युक्त पृ0 63
15. माथुर, वी.एस., जाकिर हुसेन एल्यूकेशनिस्ट एण्ड टीचर, नई दिल्ली, पृं0 34, 1969
16. उपर्युक्त पृ. 53